पं॰ ऊषापति संगीत श्रृंखला (Music Series) की
भारतीय संगीत वाद्य वर्गीकरण पद्धति

संकलन कर्ता

चन्द्रमोहन वर्मा
9478827372

पं० ऊषापति संगीत श्रृंखला (Music Series) की

✸ भारतीय संगीत वाद्य वर्गीकरण पद्धति ✸

'स्वर प्रधान' भारतीय संगीत में प्राचीन काल से ही भारतीय शास्त्रकारों द्वारा भारतीय संगीत वाद्यों के निर्माण में प्रयुक्त सामग्री (Building Material) के आधार पर किये गये **वाद्य वर्गीकरण** (Classification) को नकारते (Reject) हुए आधुनिक संगीत शास्त्रकार पं० ऊषापति जी एक नई वाद्य वर्गीकरण पध्दति प्रचार में लाये **जो वाद्यों के निर्माण में प्रयुक्त सामग्री के स्थान पर संगीत तत्वों (स्वर, लय, ताल आदि) पर आधारित है।**

अपनी इस नई वाद्य वर्गीकरण पध्दति में पं० ऊषापति जी ने भारतीय संगीत वाद्यों को सात वर्गों में विभाजित किया है। संगीत वाद्यों के यह सात वर्ग इस प्रकार हैं।

(1) अस्वर वाद्य । (2) स्वर वाद्य । (3) संगीत वाद्य ।

(4) अवनध्द वाद्य। (5) लय वाद्य। (6) ताल वाद्य । (7) घन वाद्य ।

आगे बढ़ने से पूर्व हम सर्व प्रथम पं० ऊषापति जी की इस नई वाद्य वर्गीकरण पध्दति में प्रयुक्त कुछेक अप्रत्याशित तथा असंगीतिक शब्दों पर विस्तारपूर्वक विचार करना आवश्यक समझते हैं, ताकि इस विषय को समझने में पाठकों को कोई कठिनाई न हो।

✸ 'वाद्य' शब्द का विश्लेषण ✸

'वाद्य' शब्द की एक बहुत ही संक्षिप्त परिभाषा इस प्रकार दी गई है।

ध्वनि उत्पादक उपकर्णों, यंत्रों अथवा साज़ों को 'वाद्य' कहते हैं।

ध्वनि उत्पादक वाद्यों की इस संक्षिप्त परिभाषा से उनका संगीत सम्बन्धित वाद्य होना सिध्द नहीं होता, क्योंकि उन ध्वनि उत्पादक यत्रों अथवा उपकर्णों से पैदा होने वाली ध्वनियों की संगीत सम्बन्धित गुणवत्ता एवं विशेषताओं का कोई ज्ञान नहीं होता। हमारा कहने का भाव यह है कि ध्वनि उत्पादक उन उपकरर्णों के बजने/बजाने से पैदा होने वाली ध्वनियां क्या सरस भी होती हैं, कानों को सुनने में अच्छी भी लगती हैं या केवल कोलाहल (शोर) ही होती हैं।

पाठक जानते ही हैं कि संगीतिक रचनाओं को स्वरूप देने के लिए हमें केवल सरस, मधुर तथा रञ्जक संगीतोपयोगी ध्वनियों की ही आवश्यकता होती है ।

इसी बात को ध्यान में रख कर हमारे संगीत शास्त्रकारों ने इन संगीत वाद्यों को अनेक प्रकार से परिभाषित किया है।

सर्व प्रथम उन्होंने संगीतोपयोगी वाद्यों को ही संगीत वाद्य कहा है।

संगीत शास्त्रकारों ने इसे इस प्रकार भी परिभाषित किया है कि:-सरस, मधुर, तथा रञ्जक संगीतोपयोगी ध्वनियों के उत्पादक उपकर्णों को संगीत 'वाद्य' कहते हैं।

संगीत शास्त्रकारों द्वारा दी गई संगीत वाद्यों की इन उपरोक्त सभी परिभाषाओं से आधुनिक संगीत शास्त्रकार पं० ऊषापति जी सहमत नहीं हैं। उनकी दृष्टि में संगीत प्रदर्शन में प्रयुक्त प्रत्येक वाद्य संगीत वाद्य ही हो या उसे 'संगीत वाद्य' ही कहा जाए, ऐसा आवश्यक नहीं।

संगीत प्रदर्शन में आज ऐसे अनेकों 'वाद्य' प्रचार में हैं जो संगीत प्रदर्शन में प्रयुक्त तो अवश्य होते हैं परन्तु पं० ऊषापति जी **उनमें स्वराभाव (स्वरों की कमी अर्थात् 'स्वर' में 'न' होना) होने के कारण उन्हें 'संगीत वाद्य' नहीं मानते।** जैसे चिमटा, मंजीरा, खरताल आदि।

ऐसे 'वाद्य' स्वर में मिले या मिलाये नहीं जाते अपितु उन की रचना (बनावट) पूरी हो जाने पर, उनसे जो भी ध्वनि पैदा होती है, वही ध्वनि उनकी स्थाई तथा स्थिर ध्वनि होती है। पं० ऊषापति जी ऐसे उपकर्णों को केवल 'वाद्य' ही कहते हैं।

'स्वर वाद्यों' के बारे में पं० ऊषापति जी का कथन है कि:-

ऐसे वाद्य जो स्वर में मिलाये जा सकें, उन्हें 'स्वर वाद्य' कहते हैं।

यहां 'स्वर' के बारे में पाठकों को स्पष्ट कर दें कि:-

ऐसी संगीतोपयोगी ध्वनि, जो स्थापित किये गये आधार स्वर के साथ सम्वाद(Harmony)के आधार पर आनुपातिक सम्बन्ध बनाये रखे, उसे स्वर कहते हैं।

स्वर में मिलाये जाने वाले वाद्य दो प्रकार के होते हैं।

(1) स्वर वाद्य (2) संगीत वाद्य।

स्वर वाद्य:- कलाकार प्रदर्शन पूर्व अपने 'ध्वनि आधार' 'षडज' को बनाये रखने के लिये जिस 'वाद्य' का प्रयोग करते हैं, उसे 'स्वर वाद्य' कहते हैं जैसे:- तानपूरा, तुम्बा, इकतारा आदि।

यह 'स्वर वाद्य' प्रायः षड़ज स्वर में ही मिलाये जाते हैं तथा प्रदर्शन पर्यन्त उसी षड़ज स्वर में गूंजते रहते है।

संगीत वाद्यः- ऐसे वाद्य जिन पर भिन्न- भिन्न प्रकार से भिन्न- भिन्न सप्तकों के भिन्न-भिन्न स्वरों की उत्पत्ति सम्भव हो, उन्हें संगीत वाद्य कहते हैं।

ऐसे वाद्यों पर संगीतिक रचनायें बजाई जाती हैं। जैसे सितार, सरोद, हारमोनियम आदि।

✸ स्वर का विश्लेषण ✸

संगीत शास्त्रकारों ने 'स्वर' की एक बहुत ही संक्षिप्त परिभाषा इस प्रकार दी है।

स्वः रञ्जयति अर्थात् जो रञ्कता देता है उसे 'स्वर' कहते हैं।

स्वर की एक अन्य परिभाषा इस प्रकार दी गई हैं :-

संगीतोपयोगी ध्वनि को 'स्वर' कहते हैं।

संगीत शास्त्रकारों ने 'स्वर ' को इस प्रकार भी परिभाषित किया है।

ऐसी संगीत उपयोगी ध्वनि, जो सुनने में मधुर हो तथा श्रोताओं के चित्त (मन) का रञ्जन करे, उसे 'स्वर ' कहते हैं।

स्वर की यह उपरोक्त सभी परिभाषायें शत प्रतिशत सही हैं, परन्तु पं० ऊषापति जी 'स्वर' की इन उपरोक्त सभी परिभाषाओं से सहमत नहीं हैं। उनकी दृष्टि में कोई भी ध्वनि संगीतोपयोगी ध्वनि हो सकती है, सरस भी हो सकती है, मधुर भी हो सकती है, तथा रञ्जक भी हो सकती है, परन्तु फिर भी इन समस्त संगीतोपयोगी विशेषताओं के होते हुए भी ऐसी ध्वनियां 'स्वर' नहीं कहला सकती।

अब प्रश्न पैदा होता है कि यह सरस, मधुर तथा रञ्जक संगीतोपयोगी ध्वनियां 'स्वर' क्यों नहीं हो सकती ? प्राचीन संगीत शास्त्रकारों ने तो इस 'स्वर' का परिचय ऐसा ही दिया है। अर्थात् सरस, मधुर तथा रञ्जक संगीतोपयोगी ध्वनियों को 'स्वर' कहते हैं।

पाठकों के प्रश्न का उत्तर देते हुए पं० ऊषापति जी कहते हैं, कि 'स्वर' की उन उपरोक्त सभी परिभाषाओं के साथ उनकी एक शर्त भी है जिस का उल्लेख करना, शायद हमारे संगीत शास्त्रकार भूल गये हैं।

वह शर्त(Condition) यह है कि ऐसी मधुर, सरस तथा रञ्जक संगीतोपयोगी ध्वनियों को 'स्वर' की संज्ञा प्राप्त करने के लिये किसी स्थापित संगीत उपयोगी ध्वनि, जिसे हम संगीत की भाषा में 'षड़ज' स्वर भी कहते हैं, के साथ सरल अनुपात(Simple Proportion) से सम्वन्धित होना होता है। जैसे स-प के मध्य 2:3 का अनुपात होता है, स-म स्वरों के मध्य 3:4 का अनुपात तथा स-सं स्वरों के बीच 1:2 का अनुपात होता है।

सरल भाषा में आप यूं भी कह सकते हैं कि कलाकार द्वारा स्थापित किये गये 'आधार स्वर'(Basic Note) के साथ सम्वाद (Harmony) के आधार पर आनुपातिक (Proportionate) सम्वन्ध रखने वाली संगीतोपयेगी ध्वनि को ही 'स्वर' कहते हैं।

पं० ऊषापति संगीत श्रृंखला (Music Series)
की वाद्य वर्गीकरण पध्दति का पहला वर्ग

अस्वर वाद्य वर्ग

'स्वर प्रधान' भारतीय संगीत के इस प्रस्तुत विषय में 'अस्वर' शब्दों का उल्लेख पाठकों को अवश्य ही असमंजस की स्थिति में डाल देगा , क्योंकि पाठकों ने इन **अस्वर वाद्यों** के बारे में आज से पहले न कभी कहीं पढ़ा होगा तथा नाहि कभी गुरूजनों से सुना होगा।

यदि ध्यान पूर्वक देखा जाये,तो संगीत की दृष्टि से **संगीत वाद्यों** का यह **'अस्वर वाद्य'** वर्ग पूर्ण रूप से एक असंगीतिक(Non Musical) तथा अमान्य(Unacceptable) परिकल्पना ही कही जा सकती है, **क्योंकी 'स्वर' के बिना संगीत नहीं होता।**

पं० ऊषापति जी के इस 'अस्वर वाद्य' वर्ग को असंगीतिक तथा अमान्य करार देते हुए पाठक प्रश्न कर सकते हैं कि अभी तक तो हमने संगीत ग्रन्थों में शुध्द स्वर, विकृत स्वर, कोमल स्वर, तीव्र स्वर, वादी स्वर, सम्वादी स्वर, वक्र स्वर तथा कण स्वर आदि अनेक स्वर प्रकारों (भेदों) के बारे में अवश्य पढ़ा है, **परन्तु स्वर के इस 'अस्वर' भेद के बारे में कहीं भी तथा किसी भी ग्रन्थ में नहीं पढ़ा।**अन्ततः पढ़ते भी कहां , क्योंकि यह संगीतिक शब्दावली (Terminology) का शब्द ही नहीं है।

परन्तु फिर भी न जाने क्यों हमें 'अस्वर' सम्बन्धी इस उपरोक्त उल्लेख से कुछ- कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि कभी न कभी ऐसे 'अस्वर वाद्यों' का कोई न कोई प्रयोग अवश्य होता रहा होगा या हो रहा है। अभी तक तो हम यही कह सकते हैं कि **पं० ऊषापति जी ने इस 'अस्वर' शब्द को संगीतोपयोगी ध्वनि 'स्वर' से सम्बन्धित करके एक नया विवादास्पद (debatable) विषय अवश्य बना दिया है।**

इस लिये हम चाहते हैं कि इन 'अस्वर वाद्यों' का उल्लेख करने वाले आधुनिक संगीत विद्वान पं० ऊषापति जी की इस तथा कथित(So-Called)'अस्वर वाद्यों' की परिकल्पना को यूं ही झुठला कर आगे न निकल जायें, अपितु उनके द्वारा बनाये गये इन 'अस्वर वाद्यों' के वर्ग के अस्तित्व की सच्चाई को जानने के लिये इनका गहन अध्ययन करते हुए इन की चीरफाड़ (Operation) अवश्य करें, ताकि उनके सम्भावित स्वरूप को समझ सकें।

इसके लिए यह आवश्यक है कि हम सर्वप्रथम 'अस्वर' शब्द के 'मूल' 'स्वर' शब्द पर प्रकाश अवश्य डालें।

'स्वर' का विश्लेषण

'स्वर' संगीत शब्दावली का एक बहुत ही महत्वपुर्ण शब्द है।
संगीत शास्त्रकारों ने 'स्वर' को इस प्रकार परिभाषित किया है।
स्वः रञ्जयति अर्थात् जो रञ्जकता देता है, उसे 'स्वर' कहते हैं।
'स्वर' की एक अन्य परिभाषा इस प्रकार भी दी है।
संगीतोपयोगी ध्वनि को 'स्वर' कहते हैं।

इसी 'स्वर' को संगीत शास्त्रकारों ने इस प्रकार भी परिभाषित किया है।

ऐसी संगीतोपयोगी ध्वनि जो कानों को सुनने में अच्छी लगे तथा लोगों के चित्त का रञ्जन भी करे, उसे 'स्वर' कहते हैं।

संगीत शास्त्रकारों द्वारा दी गई **'स्वर'** की इन उपरोक्त सभी परिभाषाओं से हट कर पं० ऊषापति जी ने इस **'स्वर'** को एक नई परिभाषा दी है।

ऐसी संगीतोपयोगी ध्वनि जो सप्तक के मूलाधार षड़ज स्वर के साथ 'सम्वाद'(Harmony) के आधार पर आनुपातिक (Proportional) सम्बन्ध बनाये रखती है, उसे 'स्वर' कहते हैं।

एक अन्य स्थान पर पं० ऊषापति जी 'स्वर' को इस प्रकार भी परिभाषित करते हैं।

स्थापित 'आधार स्वर' षड़ज से मधुर आनुपातिक सम्बन्ध बनाये रखने वाली संगीतोपयोगी ध्वनि को 'स्वर' कहते हैं।

आगे बढ़ने से पूर्व यहां पाठकों को स्पष्ट कर दें कि : स्वर सप्तक के आधार स्वर (Basic Note) षडज के साथ सम्वाद के आधार पर मधुर आनुपातिक सम्बन्ध (Proportional relation) बनाये बिना कोई भी संगीतोपयोगी ध्वनि चाहे कितनी भी सरस क्यों न हों, कितनी भी मधुर क्यों न हो, 'स्वर' नहीं बन सकती अर्थात् उसे 'स्वर' नहीं कह सकते।

संगीतोपयोगी ध्वनि को 'स्वर' बनने के लिये 'स्थापित आधार स्वर' के साथ मधुर,आनुपातिक सम्बन्ध रखने होते हैं।

उधाहरण स्वरूप स्थापित किये गये 'आधार स्वर' षडज से 1:2 के अनुपात से **दुगुनी ऊंची ध्वनि** तार सप्तक के षडज (सं) स्वर की होती है। इसी **आधार स्वर षडज मध्य सप्तक के षड़ज से** 2:3 के अनुपात से डेडगुना ऊंची ध्वनि पञ्चम स्वर की होती है, तथा इसी मध्य सप्तक षड़ज से 4:5 के अनुपात से सवागुन ऊंची ध्वनि गन्धार (ग) स्वर की होती है।

✸ अस्वर वाद्यों का विश्लेषण ✸

नोट :- इन अस्वर वाद्यों का अध्ययन करने से पूर्व पाठकों को यह परामर्श दिया जाता है कि वे इस से पहले दिये गये 'स्वर' शब्द का विस्तृत तथा गहन अध्ययन अवशय कर लें।

पं० ऊषापति जी ने अपनी इस नई 'वाद्य वर्गीकरण पध्दति' में वाद्यों के एक नये वर्ग का उल्लेख किया है, जिसे उन्हों ने 'अस्वर वाद्य' वर्ग कहा है।

यह 'अस्वर' एक असंगीतिक (Non-Musical) शब्द है, जिसकी उत्पत्ति संगीतिक शब्द 'स्वर' के साथ 'अ' उपसर्ग लगा कर की गई है। 'अ' उपसर्ग लग जाने से यह 'अस्वर' शब्द स्वर शब्द का विपरीतार्थक शब्द नहीं बन जाता, अपितु नकारात्मक (Negativity) भावना ग्रहण कर लेता है। अर्थात् 'स्वर' भी नहीं रहता।

आधुनिक संगीत शास्त्रकारों ने 'अस्वर वाद्यों' के इस नये वर्ग को अनेक प्रकार से परिभाषित किया है।

(1) ऐसे वाद्य जिन के बजने/बजाने से स्वरों की उत्पत्ति नहीं होती, उन्हें 'अस्वर वाद्य' कहते हैं।

(2) ऐसे वाद्य जो स्वरोत्पादक नहीं होते, उन्हें 'अस्वर वाद्य' कहते हैं।

(3) जो वाद्य स्वर में मिले या मिलाये नहीं जाते, उन्हें 'अस्वर वाद्य' कहते हैं।

(4) असंगीतिक ध्वनियां पैदा करने वाले वाद्यों को 'अस्वर वाद्य' कहते हैं।

(5) ऐसे वाद्य जिनके बजने/बजाने से उत्पन्न होने वाली ध्वनियों का संगीतिक प्रयोग नहीं होता, उन्हें 'अस्वर वाद्य' कहते हैं।

संगीत शास्त्रकारों ने इन 'अस्वर वाद्यों' के भिन्न-भिन्न लक्षण कहे हैं।

(1) सर्वप्रथम जो वाद्य स्वरोत्पादक नहीं होते उन्हें 'अस्वर वाद्य' कहते हैं।

(2)अस्वर वाद्यों की रचना (बनावट) पूरी हो जाने के पश्चात,उनके बजने/बजाने से जो भी ध्वनि पैदा होती है, वही ध्वनि उनकी सही तथा स्थाई ध्वनि होती है।

(3) ऐसी ध्वनियों का संगीत में प्रयोग नहीं होता।

(4) इन 'अस्वर वाद्यों' के बजने/बजाने से पैदा होने वाली ध्वनियां अपरिवर्तनीय (न बदलने वाली) होती हैं। अर्थात् ऊंची/नीची नहीं हो सकती।

(5) इन अस्वर वाद्यों के बजने/बजाने से पैदा होने वाली 'मूल'(Main) ध्वनि को छोड़ कर, उनसे अन्य कोई और ध्वनि पैदा नहीं होती।

(6) इन 'अस्वर वाद्यों' के बजने/बजाने से पैदा होने वाली ध्वनि का सप्तक के स्वरों की भान्ति न कोई अपना 'आधार स्वर' होता है, तथा नाहि यह किसी अन्य स्वर का आधार होती है।

(7) स्वंतत्र रूप से पैदा होने वाली इन 'अस्वर वाद्यों' की ध्वनि संगीत प्रर्दशन के साथ एक ही गूंज (ध्वनि) में गूंजती रहती है।

इन 'अस्वर वाद्यों' के बजने/बजाने से पैदा होने वाली ध्वनि का सप्तक के अन्य स्वरों के साथ न कोई सम्वादक सम्बन्ध(Harmonic Relation) होता है तथा ना हि यह किसी अन्य स्वर की सम्वादक (Harmonic) ध्वनि होती है।

यह अस्वर वाद्य' केवल संगीतिक रचनाओं के 'लयात्मक प्रवाह' को ही प्रदर्शित करते हैं।

✸ 'अस्वर वाद्य' प्रश्नोत्तरी ✸

पं० ऊषापति जी की इस **'नई वाद्य वर्गीकरण पद्धति'** में इन 'अस्वर वाद्यों' के वर्ग के उल्लेख ने एक बार तो संगीत जिज्ञासुओं को झकझोर कर रख दिया, **क्योंकि प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक के किसी भी ग्रन्थकार ने अपने संगीत ग्रन्थ में इन 'अस्वर वाद्यों' का कोई उल्लेख नहीं किया है।**

सर्व प्रथम बीसवीं शताब्दी के प्रकाण्ड संगीत विद्वान पं० ऊषापति जी ने ही अपनी इस नई वाद्य वर्गीकरण पध्दति में वाद्यों के एक नये वर्ग का उल्लेख किया है, जिसे उन्हों ने 'अस्वर वाद्य' वर्ग कहा है।

इन 'अस्वर वाद्यों' के अन्तरगत उन्हों ने केवल उन वाद्यों को ही आवंटित किया है जो स्वर में मिले या मिलाये नहीं जाते, परन्तु संगीत में उन का प्रयोग अवश्य होता है।

पाठकों ने प्रश्न कर दिया:- क्या 'अस्वर वाद्य' भी होते हैं?

पं० ऊषापति जी ने इस प्रश्न का 'उत्तर' हां में दिया। अर्थात् हां, 'अस्वर वाद्य' भी होते हैं।

प्रश्न:- यदि 'अस्वर वाद्य' होते हैं, तो फिर असंगीतिक वाद्य (Non Musical) **भी होते होंगे?**

उत्तर:- होते होंगे ही नहीं, अपितु होते हैं, यदि उनका संगीतिक प्रयोग किया जाए अर्थात्, संगीत में उनका प्रयोग किया जाए।

प्रश्न:- क्या यह **'अस्वर वाद्य'** आज भी प्रचार में हैं? हमारे कहने का भाव यह है कि क्या आज भी संगीत प्रदर्शन में इनका प्रयोग किया जाता है?

उत्तर:- हां, इन 'अस्वर वाद्यों' का प्रयोग प्राचीन काल में भी होता था, मध्य काल में भी होता था, तथा आज भी हो रहा है।

पं० ऊषापति जी द्वारा दिये जा रहे प्रश्नों के उत्तरों से, पाठकों को एक बार तो ऐसा आभास हुआ कि कहीं आचार्य जी हमें मूर्ख तो नहीं बना रहे,

जो एक 'असंगीतिक वाद्य'(Non Musical Instrument)को संगीत वाद्य(Musical Instrument) सिध्द करने का यत्न कर रहे हैं।

हमारे चकराने वाली बात का कारण इसी 'अस्वर' शब्द का उल्लेख ही है जिस का आज से पहले कभी भी किसी ग्रन्थकार ने अपने संगीत ग्रन्थ में इस का कोई उल्लेख नहीं किया हैं। केबल यही नहीं, अपितु भारतीय संगीत के किसी भी काल में इन 'अस्वर वाद्यों' के किसी भी प्रसिध्द अथवा अप्रसिध्द वादक कलाकार का कोई उल्लेख मिलता हो। बीसवीं शताब्दी के केवल एकमात्र आप (पं० ऊषापति जी) ही एक ऐसे संगीत शास्त्रकार हैं, जिन्हों ने इन 'अस्वर वाद्यों' का उल्लेख किया है।

पाठकों के प्रश्न का उत्तर देते हुए पं० ऊषापति जी ने कहा कि ऐसा नहीं है कि मैं ने ही पहली बार इन **'अस्वर वाद्यों'** का कोई उल्लेख किया हो अपितु प्राचीन काल में भी इन **'अस्वर वाद्यों'** का प्रयोग होता था, मध्य काल में भी होता था तथा आज भी भिन्न भिन्न गायन शैलियों के साथ इन **'अस्वर वाद्यों'** का प्रयोग हो रहा है। जैसे:- चिमटा, मंजीरा, खरताल, घंटी, घड़ियाल आदि जिन का **प्रयोग मन्दिरों में पूजा, आरती के समय भजन, कीर्तन गायन शैलियों के साथ लय वाद्यों के रूप में किया जाता है।**

यहां पाठकों को स्पष्ट कर दें कि शास्त्रीय संगीत में इन 'अस्वर वाद्यों' का कोई प्रयोग नहीं किया जाता।

‘अस्वर वाद्य’ प्रश्नोत्तरी

संगीत जिज्ञासुओं द्वारा किये जा रहे या पूछे जा रहे प्रश्नों से पं० ऊषापति जी को कुछ ऐसा आभास हुआ कि पाठक **‘अस्वर वाद्यों’ के इस नये पाठ (Lesson) से कुछ असहज महसूस कर रहे हैं अर्थात् ‘अस्वर वाद्यों’ का विषय उन्हें परेशान कर रहा है।**

संगीत जिज्ञासुओं की ऐसी असहजता को भांप कर पं० ऊषापति जी ने इस विषय के प्रत्येक पहलु पर प्रश्नोत्तर (Question/Answers) **विधि के रुप में विचार करने का मन बनाया।**

पं० ऊषापति तथा पाठकों के मध्य हुए प्रश्नोत्तर:-

प्रश्न:- ‘अस्वर’ किसे कहते हैं ?

उत्तर:- जो ‘स्वर’ नहीं है, उसे ‘अस्वर’ कहते हैं।

इस ‘अस्वर’ शब्द की रचना संगीतोपयोगी ध्वनि ‘स्वर’ के साथ ‘अ’ उपसर्ग लगा कर की गई है। संगीत शास्त्रकारों ने इस ‘अस्वर‘ शब्द को इस प्रकार परिभाषित किया है कि:-

जो स्वर नहीं है या जो ‘स्वर’ में नहीं है, उसे ‘अस्वर’ कहते हैं।

प्रश्न:- क्या यह‘अस्वर’एक असंगीतिक(Non-Musical)शब्द है?

उत्तर:- हां, शब्द रचना के अनुसार यह ‘अस्वर‘ शब्द अवश्य ही एक असंगीतिक शब्द है, परन्तु पं० ऊषापति जी इसे असंगीतिक शब्द नहीं मानते।

प्रश्न:- क्या यह ‘अस्वर’ वादी स्वर, सम्वादी स्वर, वक्र स्वर स्पर्श स्वर, की भान्ति कोई ‘स्वर भेद’ है?

उत्तर:- नहीं, यह ‘अस्वर’ स्वर शब्द का कोई भेद नहीं है। आप यूं भी कह सकते हैं कि यह ‘अस्वर’ स्वर है ही नहीं,जैसे कि हम ऊपर कह आये हैं।

प्रश्न:- क्या आप का सरस, मधुर तथा रञ्जक संगीतोपयोगी ध्वनि ‘स्वर‘ को असंगीतिक ‘अस्वर’ शब्द बनाना उचित है? हमारा कहने का भाव है

कि क्या ‘अ’ उपसर्ग लगा कर ‘स्वर’ को एक असंगीतिक शब्द बनाना उचित है?

उत्तर:- मैं ने कब कहा कि ‘अ’ उपसर्ग लग जाने से ‘स्वर’ एक असंगीतिक शब्द बन जाता है या बन जायेगा।

भाषा की दृष्टि से आप यह अवश्य कह सकते हैं, परन्तु संगीतिक दृष्टि से ‘स्वर’ के साथ ‘अ’ उपसर्ग लग जाने के बाद भी उस की संगीतिक उपयोगिता बनी रहती है।

प्रश्न:- हंसते हुए पाठकों ने प्रश्न किया तो फिर ‘अस्वर वाद्य’ भी होते होंगे ?

उत्तर:- हां ‘अस्वर वाद्य’ भी होते हैं,परन्तु यह असंगीतिक नहीं होते। संगीत में इन ‘अस्वर वाद्यों’ का प्रयोग ‘स्वर वाद्यों’ के रूप में नहीं, अपितु लय वाद्यों के रूप में किया जाता है।

अब पं० ऊषापति जी बोले कि अब आप प्रश्न करोगे कि आपने मधुर, सरस तथा रञ्जक संगीतोपयोगी ध्वनि ‘स्वर’ के साथ ही ‘अ’ उपसर्ग क्यों लगाया, जबकि लय, मात्रा तथा ताल जैसे अन्य संगीतिक शब्द भी तो थे ?

पाठक बोले:- यह तो स्वभाविक ही है कि आप ने संगीतोपयोगी ध्वनि ‘स्वर’ शब्द को ही ‘अस्वर’ शब्द क्यों बनाया?

उत्तर:- मात्रा को ‘अमात्रा’, लय को ‘अलय’ तथा ताल को ‘अताल’ बनाना भाषा की दृष्टि से बिलकुल गलत था। इसी लिये हम ने ‘स्वर’ सम्बन्धित विषय होने के कारण ही इस ‘स्वर’ शब्द के साथ ‘अ’ उपसर्ग लगाया।

प्रश्न:- क्या ‘अस्वर वाद्य’ ‘संगीत वाद्य’ भी होते हैं,

उत्तर:- हां, यह ‘अस्वर वाद्य’ ‘,संगीत वाद्य’ भी होते हैं,परन्तु संगीत प्रदर्शन में इन ‘अस्वर वाद्यों’ का प्रयोग लय वाद्यों के रूप में ही किया जाता है, स्वर वाद्यों के रूप में नहीं।

प्रश्न:- जब कि यह 'अस्वर वाद्य' स्वरोत्पादक वाद्य नहीं होते, तो फिर इन को भारतीय संगीत वाद्यों में स्थान क्यों दिया गया?

उत्तर:- पाठक जानते हैं कि संगीत का मूल तत्व 'स्वर' है।

प्रश्न:- यदि संगीत का मूल तत्व 'स्वर' है तो 'स्वर' का मूल तत्व क्या है?

उत्तर:- 'स्वर' का मूल तत्व 'गति' है। गति का लयात्मक प्रवाह ही ध्वन्यात्मक (ध्वनियुक्त) स्वरूप ग्रहण कर लेता है। अर्थात् ध्वनि बन जाता है।

गति दो प्रकार की होती है।

(1) नियमित गति। (2) अनियमित गति।

नियमित गति:- निरन्तर समान प्रवाह से प्रवाहित गति को **नियमित गति** कहते हैं। यदि 'गति' नियमित है तो इस से पैदा होने वाली ध्वनि भी सरस, मधुर तथा रञ्जक होगी।यदि 'गति' **अनियमित** है तो उससे पैदा होने वाली ध्वनि शोर होगी।

संगीत में नियमित गति का ही प्रयोग होता है। कलाकार इसी नियमित गति में संगीतिक रचनाओं को स्वरवद्ध करता है।

प्रश्न:- यदि इन अस्वर वाद्यों की ध्वनि संगीतोपयोगी ध्वनि है ही नहीं, तो फिर संगीत में इन की घुसपैठ क्यों ?

उत्तर:- संगीत में इन 'अस्वर वाद्यों' का प्रयोग संगीत में इन की घुसपैठ नहीं, अपितु हमारी विवशता है।

संगीत में इन 'अस्वर वाद्यों' का प्रयोग स्वर वाद्यों के रूप में नहीं अपितु 'लय वाद्यों' के रूप में किया जाता है।

यहां एक और बात पाठकों को स्पष्ट कर दें कि इन 'लय वाद्यों' के बजने/बजाने से पैदा होने वाली ध्वनि निस्सन्देह स्वरोत्पादक नहीं होती, परन्तु **तालवध्द** संगीतिक रचनाओं में यही ध्वनि **मात्रा बद्ध** गति के रूप में उनके लयात्मक प्रवाह को प्रकट अवश्य करती है। इसी कारण पं० ऊषापति जी ने इन अस्वर वाद्यों के स्थान पर लय वाद्यों का एक भिन्न वर्ग बनाया है।

प्रश्न:- **इन लय वाद्यों** को 'ताल वाद्यों' के वर्ग के अन्तरगत अवंटित क्यों नहीं किया गया ?

उत्तर:- **'ताल वाद्य'** स्वर में मिलाये जाते हैं जबकि 'लय वाद्य' स्वर में मिलाये नहीं जाते।

ताल 'लय वाद्यों' का मात्रा बध्द स्वरूप होता है।

'ताल वाद्यों' के विशेष बोल होते हैं जबकि लय वाद्यों की गति का समान मात्राओं में विभाजन होता है।

अस्वर स्वर या बेसुरा

हमारा अगला प्रश्न भी इसी 'अस्वर' के बारे में ही है जिसने अभी तक हमें असमंजस की स्थिति में डाल रखा है।

यहां हम पूछना चाहते हैं कि आप ने प्राचीन काल से ही परम्परागत भारतीय संगीत में प्रयुक्त 'बेसुरा' शब्द के स्थान पर इस नये असंगीतिक शब्द 'अस्वर' का प्रयोग करके एक नया विवाद क्यों खड़ा कर दिया अर्थात छेड़ दिया ।

पं० ऊषापति जी बोले कि भई, हमने यहां कौन सा नया विवाद खड़ा कर दिया है। न तो यह दोनों शब्द **समानार्थक शब्द** हैं तथा ना हि यह दोनों एक दूसरे के **प्रयायवाचि शब्द** हैं। अपितु यह दोनों शब्द एक दूसरे से पूर्णतया भिन्न शब्द हैं। फिर विवाद कैसा। ज़रा ध्यान दें।

अस्वर:- जो 'स्वर' नहीं है या 'स्वर' में नहीं है, उसे'अस्वर'कहते हैं।

बेसुरा:- शब्द रचना के अनुसार जो संगीतोपयोगी ध्वनि स्वर में नहीं है, उसे बेसुरा कहते हैं।

संगीत शास्त्रकारों ने 'बेसुरा' शब्द को इस प्रकार परिभाषित किया है।

'अपदस्थ' संगीतोपयोगी ध्वनि को 'बेसुरा' कहते हैं।

पं० ऊषापति जी ने 'बेसुरा' शब्द का एक विस्तृत परिचय इस प्रकार दिया है।

मंच प्रदर्शन(Stage performance) के चलते यदि कलाकार की लापरवाही या **अल्प स्वर ज्ञान के कारण 'स्वर' अपने स्थान से अपदस्थ हो जाता है, अर्थात् ऊपर/नीचे प्रयोग हो जाता है, तो ऐसे 'स्वर' प्रयोग कों 'बेसुरा' कहते हैं।**

यहां पाठकों को स्पष्ट कर दें कि 'स्वर' का ऐसा बेसुरापन अर्थात् 'बेसुरा' प्रयोग स्थाई नहीं होता अपितु उस को सुधारा जा सकता है। कलाकार अपने स्वर ज्ञान के बल पर तथा विद्यार्थी 'स्वर वाद्यों' की सहायता से स्वर प्रयोग के उस बेसुरेपन को दूर कर सकता है।

पाठकों ने प्रश्न किया, क्या 'स्वर' का यह बेसुरापन कोमल/तीव्र स्वरों की भान्ति 'स्वर' की कोई विकृत स्थिति होती है?

ऊत्तर:- हां, यह 'बेसुरापन, स्वरों' की विकृत स्थिति अवश्य होती है, परन्तु यह विकृती स्वर स्थानों के कारण नहीं अपितु स्वर प्रयोग के कारण होती है। स्वरों के बेसुरेपन की ऐसी 'विकृती' स्थाई नहीं होती, अपितु पता चल जाने पर स्वर वाद्यों की सहायता से उसे दूर किया जा सकता है।

प्रश्न:- क्या यह 'बेसुरापन' कोई 'राग लक्षण' होता है ?

ऊतर:- राग लक्षण नहीं, अपितु स्वर दोष होता है।

अन्त में इस विवाद का अन्तिम निष्कर्ष यही निकलता है कि पं० ऊषापति जी ने दोनों शब्दों को न्यायपूर्ण स्थान दिया है।

पं० ऊषापति संगीत श्रृंखला (Music Series) की वाद्य वर्गीकरण पध्दति का दूसरा वर्ग

✸ स्वर वाद्य वर्ग ✸

पं० ऊषापति जी की इस नई वाद्य वर्गीकरण पध्दति में दूसरा वर्ग 'स्वर वाद्यों' का है। भारतीय संगीत शास्त्रकारों ने इन 'स्वर वाद्यों' को अनेक प्रकार से परिभाषित किया है।

सर्वप्रथम संगीत शास्त्रकारों ने इन 'स्वर वाद्यों' की एक बहुत ही सरल तथा संक्षिप्त परिभाषा इस प्रकार दी है।

स्वरोत्पादक वाद्यों को 'स्वर वाद्य' कहते हैं।

पाठकों ने कहा कि इसमें नया क्या है! सब संगीत वाद्य स्वरोत्पादक होते हैं।

संगीत शास्त्रकारों ने इन 'स्वर वाद्यों' की एक अन्य परिभाषा भी दी है।

स्वर में मिलाये जाने वाले वाद्यों को 'स्वर वाद्य' कहते हैं।

इसी 'स्वर वाद्य' की एक अन्य परिभाषा इस प्रकार भी दी गई है।

कलाकार द्वारा अपने ध्वनि आधार (Base) को बनाये रखने के लिये जिस वाद्य का प्रयोग किया जाता है, उसे 'स्वर वाद्य' कहते हैं।

संगीत शास्त्रकारों ने इन 'स्वर वाद्यों' को इस प्रकार भी परिभाषित किया है।

किसी विशेष स्वर में मिलाये जाने वाले वाद्यों को 'स्वर वाद्य' कहते हैं।

'स्वर वाद्यों' की इस उपरोक्त परिभाषा में शास्त्रकारों ने उन विशेष स्वरों तथा उनके लिये निश्चित विशेष वाद्यों का कोई उल्लेख नहीं किया है।

क्या इन विशेष स्वरों से उन संगीत शास्त्रकारों का अभिप्राय कहीं राग के वादी-सम्वादी स्वरों से तो नहीं, जो राग में एक विशेष स्थान रखते हैं ? या अपने क्षणिक प्रयोग से राग को एक नया चमत्कारिक तथा विलक्षण रूप प्रदान करने वाले 'विवादी स्वर' से है,

जो अपने क्षणिक प्रयोग से राग के सौंदर्य तथा माधूर्य को बढ़ाता है। याद रहे कि संगीत शास्त्रकार इस 'विवादी स्वर' को 'शत्रु स्वर' भी कहते हैं।

अब विचारणीय बात यह है कि 'स्वर वाद्य' की इस उपरोक्त परिभाषा में वह कौन सा 'विशेष स्वर' है, जिसमें उस 'स्वर वाद्य' को मिलाया जाता है।'विशेष स्वर' सम्बन्धी इस उपरोक्त समस्या का सन्तोषजनक उत्तर न मिलने के कारण अन्तत: पाठक पं० ऊषापति जी की शरण में पहुंचे जिन्हों ने अपनी इस नई वाद्य वर्गीकरण पध्दति में इस 'स्वर वाद्य' वर्ग का उल्लेख किया है।

'स्वर वाद्यों' का परिचय देते हुए पं० ऊषापति जी कहते हैं कि:-

अपने 'आधार स्वर' (Basic Note) षड़ज को बनाए रखने के लिये कलाकार जिस वाद्य का प्रयोग करता है, उसे 'स्वर वाद्य' कहते हैं।

पं० ऊषापति जी ने 'स्वर वाद्य' की एक अन्य परिभाषा इस प्रकार दी है, कि:-

सप्तक के 'मूलाधार षड़ज स्वर' को बनाये रखने के लिये जिस वाद्य का प्रयोग किया जाता है, उसे 'स्वर वाद्य' कहते हैं।

इसी 'स्वर वाद्य' को एक अन्य विस्तृत परिभाषा इस प्रकार भी है।

प्रदर्शन पूर्व कलाकार द्वारा निश्चित किये जा रहे 'आधार स्वर' को मिलाने के लिये जिस वाद्य का प्रयोग किया जाता है, उसे 'स्वर वाद्य' कहते हैं। जैसे इकतारा, तुम्बा, तुम्बी तथा तानपूरा आदि।

यहां हमारी समस्या इन इकतारा, तुम्बा तथा तुम्बी आदि स्वर वाद्यों के बजने से पैदा होने वाली तुन तुन की ध्वनियों के मध्य पाई जाने वाली निरन्तरता का अभाव है।

तुन तुन की ध्वनियों के मध्य पड़ने बाले ऐसे अन्तराल को पाटने (भरने) के लिये संगीत शास्त्रकारों ने उनके आधार स्वर (मूलाधार) से सम्वादिक सम्वन्ध (Harmonie Relation) रखने वाले मध्यम तथा पञ्चम स्वरों के तार जोड़ दिये अर्थात् चढ़ा दिये। ऐसा करने से उनके मध्य पड़ने वाला तुन तुन का अन्तराल समाप्त हो जाता है तथा उनके मध्य पैदा होने वाली ध्वनियों से समरसता पैदा हो जाती हैं ।

ऐसे स्वर वाद्यों में आधुनिक तानपूरा नामक स्वर वाद्य आता है।

✱ तानपूरे स्वर वाद्य की विशेषतायें:-✱

सर्व प्रथम यहां पाठकों को स्पष्ट कर दें कि इन तानपूरे जैसे स्वर वाद्यों पर मध्यम/ पञ्चम स्वरों के तार चढ़ा देने से उनका 'आधार स्वर' नहीं बदल जाता।

यहां यह भी ध्यान रहे कि तानपूरे जैसे स्वर वाद्यों पर एक से अधिक तार चढ़ा देने से वे 'संगीत वाद्य' नहीं बन जाते, अपितु 'स्वर वाद्य' ही रहते हैं।

प्रदर्शन चलते इन स्वर वाद्यों में वही स्वर गूंजते रहते हैं, जिनमें उनको मिलाया गया होता है।

इन स्वर वाद्यों के बजने/बजाने से सहायक नादों (Over Tones) की उत्पत्ति होती रहती है जिन की सहायता से कलाकार अपना संगीत प्रदर्शन बड़ी सफलता पूर्वक सम्पन्न कर लेता है।

इन स्वर वाद्यों के बजने से संगीतिक वातावरण बना रहता है।

प्राचीन संगीत शास्त्रकारों ने अपनी प्राचीन वाद्य वर्गीकरण पध्दति में इन स्वर वाद्यों को 'तत् वाद्यों' की श्रेणी में रखा है, जबकि पं० ऊषापति जी ने इनके लिये एक नया वर्ग बनाया।

इन पर संगीतिक रचनायें नहीं बजाई जातीं।

✸ स्वर वाद्यों के लक्षण तथा लाभ ✸

(1)'ध्वनि आधार'को बनाये रखने के लिये इन **स्वर वाद्यों** का प्रयोग किया जाताहै।

(2) इन **'स्वर वाद्यों'**को मुख्य रूप से'आधार स्वर षड़ज'स्वर में मिलाया जाता है।

(3) इकतारे स्वर वाद्य की एक तार के बजने से पैदा होने वाली तुन तुन की खंडित ध्वनि को पाटने (भरने) के लियें **संगीत कारों ने** इस इकतारे की ध्वनि के साथ सम्वादिक सम्बन्ध(Harmonic Relation) रखने वाले खरज, मध्यम तथा पञ्चम स्वरों के तार चढ़ा दिये अर्थात् जोड़ दिये। **इकतारे की** खंडित ध्वनि के साथ एकसारता पैदा करने वाले इस चार तारों वाले वाद्य को संगीत कारों ने 'तानपुरा' कहा है।

(4) एक से अधिक तारें चढ़ाये जाने से यह 'इकतारा' स्वर वाद्य संगीत वाद्य नहीं बन जाता अपितु **'स्वर वाद्य'** ही रहता है।

(5) प्रदर्शन के चलते कलाकार द्वारा निश्चित किया गया यह 'आधार स्वर' इन **स्वर वाद्यों** में गूंजता रहता है।

(6) स्वर वाद्यों में गूंजने वाली यही गूंज **कलाकार को एकाग्रचित करती है।**

(7) इन स्वर वाद्यों की गूंज से **संगीतिक वातावरण** बना रहता हैं।

(8)यह 'स्वर वाद्य' आधार स्वर को बनाये रखते हैं और कलाकार को ध्वनि प्रयोग के मूल से बांधे रखते हैं।

(9) इन **'स्वर वाद्यों'** के बजने/ बजाने से पैदा होने वाली गूंज **कलाकार को 'स्वर स्थापन' तथा स्वर लगाव में सहायता करती है।**

इन स्वर वाद्यों की गूंज से सहायक नादों (Over Tones) की उत्पत्ति होती है जो मञ्च प्रदर्शन में कलाकार की सहायता करते हैं।

पं० ऊषापति संगीत श्रृंखला (Music Series)

की वाद्य वर्गीकरण पध्दति का तीसरा वर्ग

✸ संगीत वाद्य वर्ग ✸

पं० ऊषापति जी ने अपनी इस नई वाद्य वर्गीकरण पध्दति में वाद्यों का तीसरा वर्ग 'संगीत वाद्यों' का वर्ग बनाया है।

इन संगीत वाद्यों का परिचय पं० ऊषापति जी ने इस प्रकार दिया है कि :-

ऐसे वाद्य जिन पर संगीतिक रचनायें बजाई जाती हैं, उन्हें संगीत वाद्य कहते हैं।

संगीत वाद्यों के इस वर्ग के अन्तरगत पं० ऊषापति जी ने केवल उन वाद्यों को ही आवंटित किया है, जिन पर संगीतिक रचनायें बजाई जाती हैं। जैसे:- सितार, सरोद, बांसुरी, सारंगी, आदि।

'संगीत वाद्यों' के इस वर्ग का उल्लेख आते ही पाठकों ने प्रश्न कर दिया कि क्या यह 'संगीत वाद्य' स्वरोत्पादक वाद्य नहीं होते ? अर्थात् संगीत वाद्यों के अन्तरगत आने वाले इन वाद्यों के बजने /बजाने से पैदा होने वाली ध्वनि 'स्वर' नहीं होती।

यदि पाठकों के इस प्रश्न का उत्तर हां में है,अर्थात् संगीत वाद्यों के बजने /बजाने से 'स्वर' ही पैदा होते हैं, तो फिर पं० ऊषापति जी ने अपनी इस नई वाद्य वर्गीकरण पध्दति में इन संगीत वाद्यों को 'स्वर वाद्यों के वर्ग के अन्तरगत क्यों नहीं रखा?

यदि इस वर्ग के अन्तरगत आने वाले इन संगीत वाद्यों के बजने/ बजाने से स्वरों की उत्पत्ति नहीं होती है तो फिर पं० ऊषापति जी ने उन्हें अपनी इस नई वाद्य वर्गीकरण पध्दति में 'संगीत वाद्य' क्यों कहा।

पाठकों के इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए पं० ऊषापति जी ने स्पष्ट किया कि इन दोनों वर्गों के अन्तरगत आने वाले वाद्य **स्वरोत्पादक वाद्य** ही हैं, अर्थात् उनके बजने/बजाने से स्वर ही पैदा होते हैं। परन्तु संगीत में उन दोनों वर्गो के अन्तरगत आने वाले वाद्यों के प्रायोगिक आधार (Utility Base) भिन्न- भिन्न हैं।

इन दोनों वर्गों के अन्तरगत आने वाले वाद्यों के प्रायोगिक आधार को ध्यान में रख कर ही पं० ऊषापति जी ने इन 'स्वर वाद्यों' को दो वर्गों में विभाजित किया है।

✸ स्वर वाद्यों के यह दो वर्ग इस प्रकार हैं। ✸

(1) स्वर वाद्य । (2) संगीत वाद्य।

स्वर वाद्य:- स्वर वाद्य वे वाद्य होते हैं जिन को कलाकार प्रदर्शन पूर्व अपने 'आधार स्वर' में मिलाते हैं। अपने 'ध्वनि आधार' को बनाये रखने के लिये कलाकार लोग इन 'स्वर वाद्यों' का प्रयोग करते हैं। कलाकार के प्रदर्शन चलते यह 'स्वर वाद्य' आधार स्वर में गूंजते रहते हैं।

संगीत वाद्य:- संगीत शास्त्रकारों ने संगीत वाद्यों का एक वहुत ही संक्षिप्त परिचय इस प्रकार दिया है।

ऐसे वाद्य जिन पर ताल बध्द संगीतिक रचनायें बजाई जाती हैं, उन्हें 'संगीत वाद्य' कहते हैं।

शास्त्रकारों ने इन संगीत वाद्यों की एक विस्तृत परिभाषा भी दी है।

ऐसे वाद्य जिन पर भिन्न-भिन्न प्रकार से पैदा किये जा रहे भिन्न-भिन्न सप्तकों के भिन्न-भिन्न स्वर संयोजनों (Combination) में रची गई तालबध्द संगीतिक रचना बजाई जाती है, उन्हें 'संगीत वाद्य' कहते हैं।

इस उपरोक्त उल्लेख का सारांश यह हुआ कि 'आधार स्वर' में मिलाये जाने वाले वाद्य 'स्वर वाद्य' तथा संगीतिक प्रदर्शन के लिये प्रयुक्त वाद्य 'संगीत वाद्य' कहलाते हैं। जैसे:-सितार,सरोद, शहनाई, बांसुरी, जलतरंग, नलतरंग तथा सारंगी आदि।

पं० ऊषापति जी ने इन संगीत वाद्यों की बनावट (रचना) तथा बादन विधि के आधार पर तीन वर्गों में विभाजित किया हैं।

✸ संगीत वाद्यों के यह तीन वर्ग इस प्रकार हैं। ✸

(1) तत् वाद्य (2)वितत् वाद्य तथा (3) सुषिर वाद्य।

अब हम संगीत वाद्यों के इन तीनों वर्गों का विस्तारपूर्वक वर्णन करते हैं।

तत् वाद्य:- ऐसे संगीत वाद्य जिन पर स्वरोत्पत्ति के लिये तार चढ़ाये जाते हैं, उन्हें 'तत् वाद्य' कहते हैं। जैसे:- सितार, सरोद, तार शहनाई आदि।

इन संगीत वाद्यों की तारों पर किसी प्रहारक (Striker) द्वारा प्रहार करके अथवा गज़ (Bow) रगड़ कर स्वरोत्पत्ति की जाती है। जैसे सितार , सरोद, वैंजो, वायलिन, सारंगी आदि। इन तत् वाद्यों के दो भेद कहे जाते हैं।

(1) तत् वाद्य (2) वितत् वाद्य ।

(1) तत् वाद्य :- ऐसे वाद्य जिन पर चढ़ाई गई तारों पर किसी प्रहारक (Striker) द्वारा प्रहार करके स्वर उत्पन्न किये जाते हैं,

उन्हें तत् वाद्य कहते हैं। जैसे सितार, सरोद तथा बैंजी आदि।

इन तत् वाद्यों पर चढ़ाई गयी तारों पर आघात (प्रहार) करने के साथ ही तारों की लम्बाई घटा /बढ़ा कर भिन्न-भिन्न सप्तकों के भिन्न-भिन्न स्वर पैदा किये जाते हैं।

(2) वितत् वाद्य:- ऐसे वाद्य जिन पर चढ़ाई गई तारों पर गज़ (Bow) रगड़ कर स्वरोत्पत्ति की जाती है, उन्हें 'वितत् वाद्य' कहते हैं। जैसे सारंगी, वायलिन, दिलरूबा आदि। इन वितत् वाद्यों पर चढ़ाई गई तारों पर गज़ (Bow) रगड़ने के साथ ही तारों की लम्बाई घटा/बढ़ा कर सप्तक के भिन्न-भिन्न स्वर पैदा किये जातें हैं।

संगीत शास्त्रकारों ने सारंगी, दिलरूबा तथा तार शहनाई जैसे वितत् वाद्यों को प्राचीन वाद्य वर्गीकरण पध्दति में तत् वाद्यों के वर्ग के अन्तरगत रखा है जबकि इनकी तवली चमड़े से मढ़ी हुई होने के कारण इन्हें 'अवनद्ध वाद्यों' के वर्ग के अन्तरगत रखा जाना चाहिए था।

पं० ऊषापति जी ने इन्हें अपनी संगीत वाद्य वर्गीकरण पध्दति में 'संगीत वाद्यों' के वर्ग के अन्तरगत रखा है, क्योंकि इन पर संगीतिक रचनाएं बजाई जाती हैं।

सुषिर वाद्य:- प्राचीन संगीत शास्त्रकारों ने मुंह से हवा भर कर या फूंक कर बजाए जाने वाले 'वाद्यों' का एक नया वर्ग बनाया है।

ऐसे वाद्य जिन में किसी माध्यम द्वारा हवा भर कर या मुंह से फूंक मार कर स्वरोत्पत्ति की जाती है, उन्हें 'सुषिर वाद्य' कहते हैं।

इन सुषिर वाद्यों की एक विस्तृत परिभाषा इस प्रकार दी गई है कि:-

बांस, स्टील, पीतल तथा पलास्टिक(Plastic) आदि धातुओं की छोटे/बड़े आकार की खोखली नलियां, जिन पर भिन्न-भिन्न दूरियों पर बनाये

गये छोटे/बड़े आकार के सुराखों (Holes) से हवा फूंक कर भिन्न-भिन्न स्वर पैदा किये जाते हैं, उन्हें 'सुषिर वाद्य' कहते हैं। जैसे बांसुरी, शहनाई, अलगोज़ा तथा सपेराबीन आदि।

इन 'सुषिर वाद्यों' का अनेक प्रकार से प्रयोग किया जाता है।

इन में से कुछेक 'सुषिर वाद्यों' का प्रयोग शास्त्रीय गायन शैलियों की भान्ति स्वतंत्र वादन शैली के रूप में किया जाता है। जैसे बांसुरी, शहनाई आदि।(क्लेरीनट)

कुछेक सुषिर वाद्यों का प्रयोग सुगम संगीत के प्रदर्शन में सहायक वाद्यों (संगति करने के लिये) के रूप में किया जाता है।

इन 'सुषिर वाद्यों' का प्रयोग 'वाद्यवृन्द' (Orchestra) की रचना में एक वाद्य के रूप में भी किया जाता है।

कुछेक 'सुषिर वाद्यों' का लोक संगीत के प्रदर्शन में 'आधार स्वर' बनाए रखने के लिये भी प्रयोगकिया जाता हैं। जैसे अलगोज़ा।

पं० ऊषापति संगीत श्रृंखला (Music Series) की वाद्य वर्गीकरण पध्दति का चौथा वर्ग

✸ अवनध्द वाद्य वर्ग ✸

पं० ऊषापति जी ने अपनी इस नई वाद्य वर्गीकरण पध्दति में 'अवनध्द वाद्यों' का एक नया वर्ग बनाया है।

इन 'अवनध्द वाद्यों' का एक संक्षिप्त परिचय इस प्रकार दिया गया है।

चमड़े से मढ़े हुए 'संगीत वाद्यों' को 'अवनध्द वाद्य' कहते हैं।

इन 'अवनध्द वाद्यों' का एक अन्य परिचय इस प्रकार दिया गया है।

ऐसे वाद्य जिन पर ताल बजाए जाते हैं, उन्हें 'अवनध्द वाद्य' कहते हैं।

पं० ऊषापति जी नें 'अवनध्द वाद्यों' की एक विस्तृत परिभाषा इस प्रकार दी है।

चमड़े से मढ़े हुए ऐसे वाद्य, जिन पर संगीतिक रचनाओं के 'समय चक्कर' को बनाए रखने के लिये भिन्न-भिन्न मात्राओं के ताल बजाये जाते हैं, उन्हें 'अवनध्द वाद्य' कहते हैं।

पं० ऊषापति जी ने इन 'अवनध्द वाद्यों' को इस प्रकार भी परिभाषित किया है ।

चमड़े से मढ़े हुए ऐसे वाद्य जिन पर लयात्मक प्रवाह (Rhythmic Flow) की गति के अनुसार निश्चित किये गये ताल वाद्यों के बोल बजाए जाते हैं, उन्हें 'अवनध्द वाद्य' कहते हैं। जैसे तबला, पखावज, मृदंग तथा ढ़ोलक आदि।

इन 'अवनध्द वाद्यों' के मुख चमड़े से मढ़े हुए होते हैं।

शास्त्रकारों के अनुसार इन 'अवनध्द वाद्यों' का अधिकतर प्रयोग **ताल वाद्यों** के रूप में ही किया जाता है। अर्थात् इन पर भिन्न- भिन्न मात्राओं के ताल बजाए जाते हैं।

पं० ऊषापति जी ने इन 'अवनध्द वाद्यों के दो भेद कहे हैं।

(1) अवनध्द वाद्यों के पहले भेद में वे अवनध्द वाद्य आते हैं, जिनके मुख चमड़े की खाल से मढ़े हुए होते हैं। ऐसे वाद्यों पर केवल संगीतिक रचनाओं के समय चक्कर (आवर्तन) को बनाये रखने के लिये भिन्न-भिन्न मात्राओं के ताल बजाए जाते हैं! जैसे:- तवला, पखावज तथा मृदंग आदि।

(2) अवनध्द वाद्यों के दूसरे भेद में वे वाद्य आते हैं जिन की तवली चमड़े की खाल से ही मढ़ी हुई होती है, परन्तु उन पर स्वरोत्पत्ति के लिये तार चढ़ाये जाते हैं। ऐसे 'अवनध्द वाद्यों' पर ताल नहीं बजाए जाते अपितु ताल बध्द 'संगीतिक रचनायें' बजाई जाती हैं। जैसे सरोद, सारंगी, दिलरूबा, तार शहनाई तथा सुर बहार आदि! ऐसे वाद्यों को 'अवनध्द वाद्य' न कहकर पं० ऊषापति जी ने इन्हें 'तत् वाद्यों' के वर्ग के अन्तरगत आवंटित किया है।

पं० ऊषापति संगीत श्रृंखला(Music Series)
की वाद्य वर्गीकरण पध्दति का पांचवा वर्ग
लय वाद्य वर्ग

पं० ऊषापति जी ने अपनी इस नई वाद्य वर्गीकरण पध्दति में 'लय वाद्यों' का एक अलग वर्ग बनाया है। इस ' **लय वाद्य' वर्ग के अन्तरगत** पं० ऊषापति जी ने **उन वाद्यों को आरक्षित किया है, जो केवल 'संगीतिक लय' को ही प्रदर्शित करते हैं।**

यहां पाठक प्रश्न कर सकते हैं कि क्या यह संगीतिक लय साधारणलय से भिन्न लय होती है।

हां ! यह **संगीतिक लय** एक बिशेष प्रकार की '**लय**' होती है जिस को समझने के लिये हमें सर्वप्रथम संगीत शास्त्रकारों द्वारा परिभाषित लय के स्वरूप को समझना होगा।

संगीत शास्त्रकारों ने लय को इस प्रकार परिभाषित किया है।

समय की समान गति को लय कहते हैं।

'लय' की समान गति को स्पष्ट करने के लिये संगीत शास्त्रकारों ने दिल की धड़कनों तथा घड़ी की टिक-टिक के उदाहरण दिये हैं।

पं० ऊषापति जी ने संगीत शास्त्रकारों द्वारा दिये गये लय के इन दोनों उदाहरणों को नकार दिया क्योंकि इन दोनों की गती निश्चित होती है। इन दोनों की गति से कोई भी तथा किसी भी प्रकार की कोई छेड़-छाड़ नहीं की जा सकती अर्थात् इन की गति को ना कोई घटा सकता है तथा ना हि कोई बढ़ा सकता है। यदि इन की गति में किसी भी कारण कोई गति परिवर्तन होता है अर्थात् घट/बढ़ जाती है, तो समझा जायेगा कि **उनकी गति में कोई गतिदोष पैदा हो गया है।** गति दोष का अर्थ है प्राणी का अस्वस्थ होना या घड़ी का संसारिक समय से पिछड़ जाना।

संगीत शास्त्रकारों द्वारा दी गई 'लय' की इस अस्पष्ट परिभाषा को स्पष्ट करने के लिये पं० उषापति जी ने इसे एक नई संक्षिप्त परिभाषा दी:-

मात्राबध्द गति को 'लय' कहते हैं।

इसी 'लय' का पं० उषापति जी ने एक अन्य विस्तृत परिचय इस प्रकार भी दिया है कि:-

संगीत प्रदर्शन हेतु कलाकार जिस गति प्रवाह को निश्चित करता है उसे संगीतिक लय कहते हैं। ऐसी संगीतिक लय को स्वयं कलाकार निश्चित करता है तथा वही इसको नियंत्रित भी करता है।

संगीत प्रदर्शन हेतु कलाकार जिस लयात्मक प्रवाह को निश्चित करता है, उसे संगीतिक लय कहते हैं तथा इसी संगीतिक लय के प्रदर्शन हेतु वह जिन वाद्यों का प्रयोग करता है उन्हें लय वाद्य कहते हैं। जैसे चिमटा, मंजीरा, खरताल, घंटी तथा घडियाल आदि के साथ-साथ ताली (Clap) भी इन लय वाद्यों की श्रेणी में आती है।

निस्सन्देह यह ताली कोई **लय वाद्य** नहीं है परन्तु अनेक संगीतिक रचनाओं के लयात्मक प्रवाह को प्रकट करने के लिये इन तालियों का प्रयोग किया जाता है। अर्थात् तालियां बजाई जाती हैं। जैसे भजन, कीर्तन, कव्वाली आदि गायन शैलियों के साथ-साथ अनेक लोक गीतों तथा पंजाबी लोकनाच गिध्दा जैसे नृत्य शैली के साथ भी तालियां बजाई जाती हैं।

यह लय वाद्य अधिकतर भिन्न भिन्न घातुओं के बने हुए होते हैं।

प्राचीन संगीत वाद्य वर्गीकरण पद्धति में शास्त्रकारों ने इन लय वाद्यों को प्राय : घन वाद्यों के वर्ग के अन्तरगत रखा है जबकि आधुनिक संगीत विद्वान पं० ऊषापति जी ने इन्हें लय वाद्यों के वर्ग के अन्तरगत आवंटित किया है।

पं० ऊषापति जी ने अपनी नई वाद्य वर्गीकरण पध्दति में इन 'अस्वर वाद्यों' के वर्ग के अंतर्गत भी आवंटित किया है क्योंकि यह स्वर में मिले या मिलाये गये नहीं होते।

यहां एक बात और पाठकों को स्पष्ट कर दें कि लय वाद्यों के लयात्मक प्रवाह में ताल के बोलों का प्रयोग नहीं किया जाता।

ताल के बोलों के बिना ताल वादन ही लय वादन कहलायेगा।

पं० ऊषापति संगीत श्रृंखला(Music Series) की वाद्य वर्गीकरण पध्दति का छटा वर्ग

✸ ताल वाद्य वर्ग ✸

पं० ऊषापति जी ने अपनी नई वाद्य वर्गीकरण पध्दति में सातवां वर्ग ताल वाद्यों का वर्ग बनाया है, जिसके अन्तरगत केवल ताल वाद्यों को ही आवंटित किया गया है।

इन ताल वाद्यों का एक बहुत ही संक्षिप्त परिचय इस प्रकार दिया गया है।

ऐसे वाद्य जिन पर भिन्न भिन्न मात्राओं के ताल बजाए जाते हैं, उन्हें ताल वाद्य कहते है

पं० ऊषापति जी ने इन ताल वाद्यों को इस प्रकार परिभाषित किया है।

ऐसे वाद्य जिन पर संगीतिक रचनाओं के लयात्मक प्रवाह की गति अनुरूप ताल वाद्यों के भिन्न भिन्न बोल बजाए जाते हैं, उन्हें ताल वाद्य कहते हैं। जैसे तवला, पखावज मृदंग तथा ढोलक आदि।

एक अन्य स्थान पर पं० ऊषापति जी ने इन ताल वाद्यों का परिचय इस प्रकार भी दिया हैं :- **संगीतिक रचना के समय बध्द लयात्मक प्रवाह को बनाए रखने के लिये जिन वाद्यों का प्रयोग किया जाता हैं, उन्हें ताल वाद्य कहते हैं।**

इन ताल वाद्यों के **'मुख' मुख्य** रूप से चमड़े की खाल से मढ़े हुए होते हैं।

इनके 'मुख' चमड़े की खाल से मढ़े हुए होने के कारण प्राचीन संगीत शास्त्रकारों ने इन्हें 'अवनध्द वाद्यों' की श्रेणी के अन्तरगत आवंटित किया है।

आधुनिक संगीत शास्त्रकार पं० ऊषापति जी ने अपनी **वाद्य वर्गीकरण पद्धति में इन्हें 'स्वर वाद्यों' की श्रेणी के अन्तरगत रखा है क्योंकि ताल वादक प्रदर्शन के समय इन ताल वाद्यों को उपयुक्त स्वर में मिलाते हैं।**

मुख्य रूप से इन्हें 'अवनध्द वाद्यों' की श्रेणी में ही रखा जाता है।

आज कल ताल वादक कलाकार इन ताल वाद्यों का स्वतंत्र रूप से सामूहिक प्रदर्शन भी करने लगे हैं। ताल वाद्यों के ऐसे सामूहिक प्रदर्शन को 'ताल वाद्य वृन्द' कहते हैं।

'ताल वाद्य वृन्द' की इस रचना में एक ही घराने के वादक कलाकार अपने अपने घराने की वादन शैली का प्रदर्शन करते हैं।

कभी कभी ताल वाद्यों के इस सामूहिक प्रदर्शन को ताल कचहरी का नाम दे कर कलाकार भिन्न-भिन्न ताल वाद्यों का सामुहिक प्रदर्शन भी करते हैं।

इस 'ताल कचहरी' नामक **तालवध्द** रचना में एक ही ताल का चुनाब करके भिन्न भिन्न ताल वाद्यों के वादक कलाकार अपने अपने वाद्यों तथा उनकी वादन शैली की विशेषताओं को ध्यान में रख कर उनका 'ताल वादन' करते हैं।

कभी कभी वादक कलाकार जल तरंग, नल तरंग वाद्यों की भान्ति छोटे /बड़े मुंह वाले तवले के दायें भागों (पुडा) को लेकर उन्हे भिन्न भिन्न स्वरों में मिला कर 'वाद्य वृन्द' रचना की भान्ति बजाते हैं।

यहां एक और बात पाठकों को स्पष्ट कर दें कि भारतीय संगीत की भिन्न भिन्न गायन शैलियों के साथ भिन्न भिन्न ताल वाद्यों का प्रयोग किया जाता है। जैसे लोक गीतों के साथ ढोलक, ख्याल शैली के साथ तवला, ध्रुप्पद शैली के साथ पखावज तथा दक्षिणी संगीत पध्दति में मृदंग नामक ताल वाद्यों का प्रयोग किया जाता है।

इन उपरोक्त अवनध्द ताल वाद्यों को छोड़कर कुछ एक अन्य प्रकार के ताल वाद्य भी प्रचार में है। जैसे बसों में गा-गा कर भीख मांगने वाले उंगलियों में लकड़ी या ठीकरों के टुकड़ों को दबा कर ताल बजाते हैं। गली मुहल्लों में बाजीगिरी का खेल दिखाने वाले थाली को ही अपना ताल वाद्य बना लेते हैं।

पं० ऊषापति संगीत श्रृंखला(Music Series)
की वाद्य वर्गीकरण पध्दति का सातवां वर्ग

✸ घन वाद्य वर्ग ✸

भारतीय संगीत में कुछेक ऐसे संगीत वाद्य भी प्रचार में हैं जो चीनी, लकड़ी, पीतल तथा मिट्टीके बने हुए होते हैं। जैसे जल तरंग, काष्ठतरंग तथा घड़ा आदि।

इन 'घन वाद्यों' में एक बहु प्रचलित वाद्य जल तरंग है। यह 'जल तरंग' नामक वाद्य चीनी के छोटे/ बड़े आकार के प्यालों का बना हुआ होता है। चीनी के इन छोटे/बड़े आकार के प्यालों में पानी भर कर इन्हें भिन्न-भिन्न स्वरों की उत्पत्ति के योग्य बनाया जाता है। पानी से भरे हुए इन प्यालों से स्वरोतपत्ति के लिये प्यालों पर लकड़ी के बने हुए एक विशेष प्रकार के प्रहारक द्वारा प्रहार किया जाता है।

इस जल तरंग नामक वाद्य पर शास्त्रीय संगीत की तालबध्द संगीतिक रचनायें बजाई जाती हैं।

इस 'जल तरंग'नामक वाद्य का प्रयोग वाद्यवृन्द(orchestra) की ताल बध्द संगीतिक रचनाओं में एक वाद्य के रूप मे किया जाता है।

'नल तरंग' नामक एक अन्य घन वाद्य भी आजकल प्रचार में है। यह नलतरंग नामक वाद्य स्टील या पीतल धातुओं की स्वरानुसार काटी गई छोटे/बड़े आकार की नलियों (Pipes) से बनाया जाता है। इन नलियों (Pipes) पर लकड़ी के बनाये गये एक विशेष प्रकार को प्रहारक द्वारा प्रहार करके भिन्न-भिन्न स्वरों की उत्पत्ति की जाती है।

इस 'नलतरंग' वाद्यों पर शास्त्रीय संगीत की मध्य लय में तालबध्द संगीतिक रचनाओं का वादन किया जाता है।

भारतीय वाद्य बृन्द में भी एक वाद्य के रूप में इस का प्रयोग किया जाता है।

समाप्त